जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

ISSN 2454-4450

मूल्य ₹ 60

हंस

नवंबर 2024

संपादक
संजय सहाय
•
प्रबंध निदेशक
रचना यादव
•
व्यवस्थापक/सह-संपादन सहयोग
वीना उनियाल
•
संपादन सहयोग
शोभा अक्षर
माने मकर्तच्यान(अवैतनिक)
•
प्रसार एवं लेखा प्रबंधक
हारिस महमूद
•
शब्द-संयोजन एवं रूपांकन
प्रेमचंद गौतम
•
ग्राफिक्स
साद अहमद
•
सोशल मीडिया
शैलेश गुप्ता
•
कार्यालय सहायक
किशन कुमार, दुर्गा प्रसाद
•
मुख्य प्रतिनिधि (उ.प्र.)
राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
•
रेखाचित्र
संदीप राशिनकर, रोहित प्रसाद अनुभूति गुप्ता, कृष्ण कुमार 'अजनबी', आस्था

कार्यालय
अक्षर प्रकाशन प्रा. लि.
4229/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2
व्हाट्सऐप : 9717239112, 9560685114
दूरभाष : 011-41050047
ईमेल : editorhans@gmail.com
वेबसाइट : www.hanshindimagazine.in

मूल्य : 60 रुपए प्रति
वार्षिक : 700 रुपए (व्यक्तिगत)
रजिस्टर्ड : 1100 रुपए
संस्था/पुस्तकालय : 900 रुपए (संस्थागत)
रजिस्टर्ड : 1300 रुपए
विदेशों में : 80 डॉलर
सारे भुगतान मनीऑर्डर/चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. (Akshar Prakashan Pvt. Ltd.) के नाम से किए जाएं.

हंस/अक्षर प्रकाशन प्रा.लि. से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे. अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है. हंस में प्रकाशित रचनाओं में विचार लेखकों के अपने हैं. उनसे हंस की सहमति अनिवार्य नहीं है. साथ ही उनके मौलिक या अप्रकाशित होने का उत्तरदायित्व संपादक और प्रकाशक का नहीं है बल्कि यह दायित्व रचनाकार का है.

प्रकाशक/मुद्रक : **रचना यादव खन्ना** द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा.लि., 4229/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित एवं चार दिशाएं, जी-39/40, सेक्टर-3, नोएडा- 201301 (उ.प्र.) से मुद्रित. संपादक–संजय सहाय.

नवंबर, 2024

मूल संस्थापक : **प्रेमचंद : 1930**
पुनर्संस्थापक : **राजेन्द्र यादव : 1986**

पूर्णांक-457 वर्ष : 39 अंक : 4 नवंबर 2024

आवरण : सिद्धेश्वर

जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

इस अंक में

संपादकीय
4. एक हिंदू-नास्तिक की उलझनें... : राजेन्द्र यादव ('हंस', अक्तूबर 2003)

अपना मोर्चा
10. पत्र

मुड़-मुड़ के देख
13. रिश्ता : मंजूर एहतेशाम ('हंस', दिसंबर 1986)

कहानियां
20. एक बेढब से मासूम सपने की कहानी : महावीर राजी
26. गोद उतराई : तेजेन्द्र शर्मा
31. तुम्हारी दुनिया से जा रहे हैं : प्रमोद द्विवेदी
40. बरगद का पेड़ : प्रीति सिन्हा
46. शिनागावा बंदर की आत्म-स्वीकृति : हारुकी मुराकामी (जापानी कहानी) (अनुवाद : कैफ़ी हाशमी)

संस्मरण
56. एक हाथी की हत्या : जॉर्ज ऑरवेल (अनुवाद : पूजा संचेती)

कविताएं
44. अलंकृति श्रीवास्तव, प्रेमा झा
45. आलोक कुमार मिश्रा, चन्द्रबिंद

लघुकथा
93. संदीप तोमर

लेख
61. सिनेमा की 'खल'नायिकाएं : पितृसत्ता की चुनौती? : रक्षा गीता

ग़ज़ल
12. श्याम निर्मोही
70. अंजू केशव, भरत तिवारी
85. सतपाल 'ख़याल'

परख
69. आदिवासी कविता का विस्तृत, व्यवस्थित गंभीर अध्ययन : वीर भारत तलवार
71. साहित्य और राजनीति की दुनिया का रोचक दस्तावेज : प्रमोद रंजन
77. सांप्रदायिकता के खिलाफ खड़ी कहानियां : कमलेश
80. ये जिंदा लोग हैं : अंजली देशपांडे
83. हौसले विकलांग नहीं होते : सुषमा मुनीन्द्र
86. नंद चतुर्वेदी रचनावली : दुर्गाप्रसाद अग्रवाल

साहित्यनामा
89. कहन सुनन को जिहि जग कीन्हा : साधना अग्रवाल

रेतघड़ी
94-97

एक हिंदू-नास्तिक की उलझनें...

(कुछ व्यक्तिगत नोट्स)

राजेन्द्र यादव

हिंदी, या कहें भारतीय भाषाओं में जिन कुछ अंग्रेजी शब्दों के पर्याय नहीं हैं उनमें ऑनेस्टी, सिंसिएरिटी और इंटीग्रिटी भी हैं, इंटीग्रिटी को क्या कहेंगे? व्यक्तित्व की अखंडता, एकात्मता? सिंसियेरिटी का अर्थ होगा : वफादारी, स्वामिभक्ति इत्यादि...उसी तरह ऑनेस्टी का मतलब होगा ईमानदारी, धर्मनिष्ठा...बहरहाल, मुझे कोई ऐसा समानार्थी नहीं मिलता जो इन शब्दों की आत्मा को सुरक्षित रखते हुए पूरी बात को सही और अविकृत तरीके से श्रोता/पाठक तक पहुंचा सके.

हर शब्द एक अवधारणा और संकेत है–वस्तु, विचार और भाव की नुमाइंदगी करने वाला चिह्न. वह ऐसी सामाजिक वास्तविकता है जो व्यक्ति के माध्यम से प्रतीक में व्यक्त होती है. पीछे कहीं वास्तविकता नहीं होगी तो उसकी अवधारणा भी नहीं होगी, परिणामतः अभिव्यक्ति के संकेत– शब्द भी नहीं होंगे. यही नहीं वस्तु, वास्तविकता और अवधारणा को समझने के लिए भी आस-पास का भाव व्यक्त करने वाले शब्द चाहिए. इन्हीं मंतव्यों, संदर्भों और अभ्यासों, यानी आसंगों से जुड़कर ही शब्द–अर्थ पाता है. शब्द अपने आप में संपूर्ण भाषा है. अजीब मनोरंजक और थका देने वाला खेल है कि हम शब्दों की सहायता से ही सही शब्द तलाश करते हैं. वफादार गुलामों की मदद से हम जंगल झाड़ियों में बागी, खोए हुए या गुलाम को पकड़ते हैं ताकि हमारी भाषा-व्यवस्था सही, सटीक और अनुशासित बनी रह सके–व्याकरण में उसे बांधा जा सके.

उतावली में कह सकते हैं कि अगर कुछ शब्दों के पर्याय नहीं हैं, तो सीधा कारण है कि हमारे यहां वे अवधारणाएं ही नहीं थीं! चूंकि अवधारणाएं नहीं थीं इसलिए वास्तविकता भी नहीं थी. तब क्या हमारे यहां ऑनेस्ट, सिंसियर, जैनुइन लोग ही नहीं थे? क्या हम हमेशा ही झूठे, मक्कार और ढोंगी यानी खंडित व्यक्तित्व के लोग रहे हैं? अंग्रेज न आए होते तो हम वह होते ही नहीं जो ये शब्द व्यक्त करते हैं? अंग्रेजों ने हमें सभ्य ही नहीं, ऑनेस्ट इत्यादि भी बनाया? शायद उनके कोश में सभ्य होने का अर्थ ही इन मूल्यों का पालन है. मानवीय आचरण के इन शब्दों का न होना, हमारे भीतर एक हीनभाव और अपराध-बोध जगाता है. इसकी जरूरत नहीं है, क्योंकि हमारे यहां निश्चय ही ईमानदार, धर्मनिष्ठ, सत्यवादी और निष्ठावान लोग और